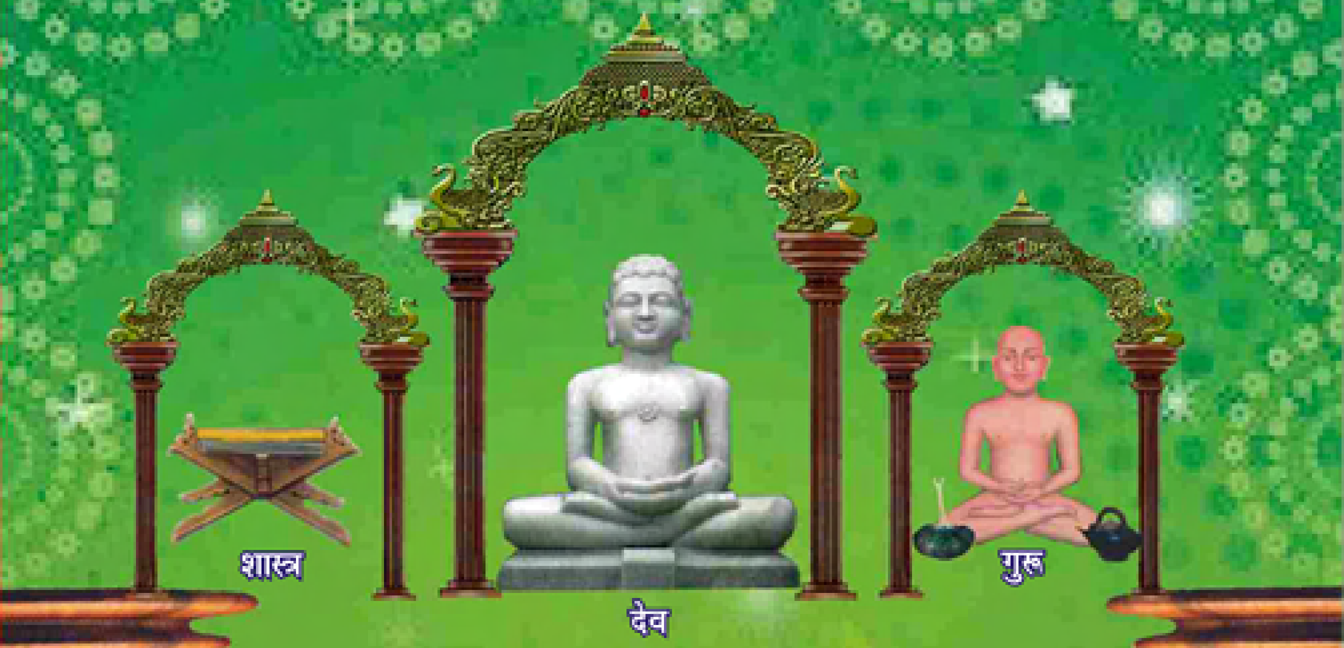

सत्पथ की ओर

पहला कदम

जैन बाल-बोध (भाग-२)

आशीर्वाद

गुजरात संत केसरी
प.पू. 108 आचार्य श्री भरतसागरजी महाराज

लेखन-संकलन

ब्रा.ब्र.क्षु. 105
श्री भव्यमति माताजी (संघस्थ)

सत्पथ की ओर

पहला कदम

जैन बाल-बोध (भाग-२)

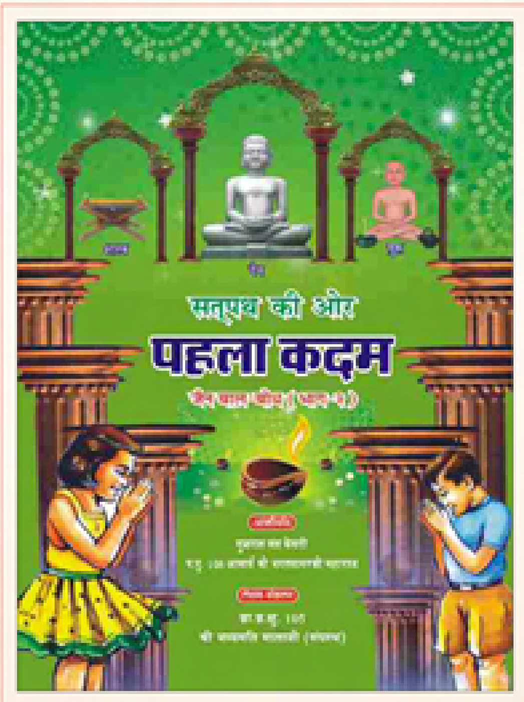

आशीर्वाद

गुजरात संत केसरी प.पू. 108 आचार्य श्री भरतसागरजी महाराज

लेखन-संकलन

ब्रा.ब्र.क्षु. 105 श्री भव्यमति माताजी (संघस्थ)

कहाँ क्या है ?

1.	प्रार्थना	01
2.	नवदेवता	02
3.	सच्चे देव शास्त्र गुरू	04
4.	गुरू भक्ति को जीवन में लाओ	05
5.	जीव–विज्ञान (चार्ट)	06
6.	मैं कौन हूं	08
7.	तीन लोक	09
8.	गति	10
9.	'कषाय' पराधीन करती है	12
10.	" पाप से बचें"	14
11.	जब बोलो तब सच–सच बोलों	16
12.	श्रावक के 'अष्ट मूलगुण'	19
13.	धर्म अहिंसा सच्चा है	20
14.	चर्तुविंध संघ	24
15.	दान	26
16.	अनमोल समय	30
17.	जैन पर्व	32
18.	मेरी भावना	34
19.	तीर्थ का महत्व	38
20.	जिनवाणी स्तुति	39
21.	गुरू भक्ति	40
22.	अभ्यास क्रम	41

1

प्रार्थना

जीवन हम आदर्श बनाये, सत्पथ की ओर कदम बढ़ायें।

वीतराग जिनदेव भजेंगे, जिनवाणी अनुशरण करेंगे।
परम दिगम्बर मुनि पूजेंगे, उन पर श्रद्धा भक्ति बढ़ायगें।।

सदा बड़ों की विनय करेंगे, छोटों के प्रति प्रेम रखेंगे।
सबसे मिलकर नेक बनेंगें, शक्ति एकता की दिखलायगें।।

गुरू उपकार नहीं भूलेंगें, गुरू संकेत से शिक्षा लेंगें।
विनय नम्रता नहीं भूलेंगें, धीरज समता को अपनायगें।।

रात्रि भोजन नहीं करेंगें, छान के पानी सदा पीयेंगे।
प्रभु के दर्शन नित्य करेंगें, इनके ही गुणगान को गायगें।।

कभी किसी से नहीं लड़ेंगें, खोटी संगत सदा तजेंगें।
दु:खियों पर हम दया करेंगे, उनकी सेवा कर सुख पायगें।।

जीवन हम आदर्श बनाये, सत्पथ की ओर कदम बढ़ायें।।

2

नवदेवता

अरिहंत

सिद्ध

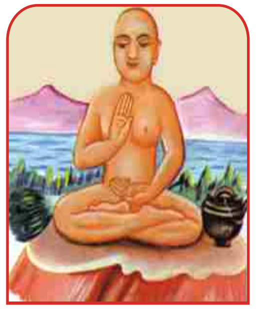

आचार्य

उपाध्याय

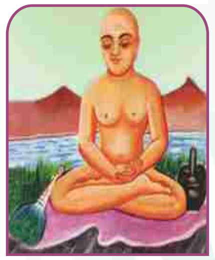

साधु

अरिहंत जय जय, भगवन्त जय जय।
सिद्ध प्रभु जय जय, परमात्म जय जय।
आचार्य जय जय, चरित्र धर्म जय जय।
उवज्झाय जय जय, उपदेशक जय जय।
साधु जीवन जय जय, रत्नत्रय जय जय।
जिनवाणी जय जय, जिनधर्म जय जय।
जिनचैत्य जय जय, जिन चैत्यालय जय जय।
नवदेवता जय जय, चौबीसों जय जय।
सुमतिसागर जय जय, भरत सागर जय जय।
सत्धर्म जय जय, सत्पथ जय जय।

जिनागम

जिनधर्म

जिनचैत्य

जिनचैत्यालय

सच्चे देव शास्त्र गुरु

सच्चे देव

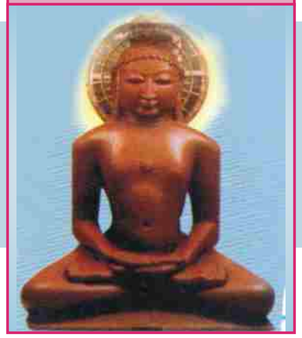

वीतराग ! सर्वज्ञ ! कहाते,
हितकारी उपदेश सुनाते।
सच्चे देव वही कहलाते,
उन भगवान को शीष झुकाते।

इतनी शक्ति हमें दो प्रभुवर,
मैं गुणगान करूं तेरा।
हाथ जोड़कर करूं वंदना,
प्रभु उद्धार करो मेरा।

सच्चे शास्त्र

वीतराग सर्वज्ञ की वाणी,
द्वादशांगमय मां जिनवाणी।
सच्चा शास्त्र वही कहलाता,
भक्ति भाव से शीष झुकाता।

जा वाणी के ज्ञान से,
सूझे लोकालोक।
सो वाणी मस्तक चढे,
सदा देत हो ढोक।

सच्चे गुरु

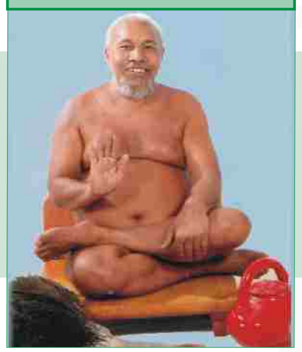

जो रत्नत्रय गुण के धारी,
नग्न दिगम्बर हैं अविकारी।
मुनिवर सच्चे गुरु कहाते,
नमस्कार हो शीष झुकाते।

मैं अज्ञानी, तुम हो ज्ञानी,
ज्ञान हमें तुम देना।
बन जाउं मैं तुमसा गुरूवर,
यह आशीष हमें देना।

गुरू भक्ति को जीवन में लाओ

हे जिनेन्द्र भक्त

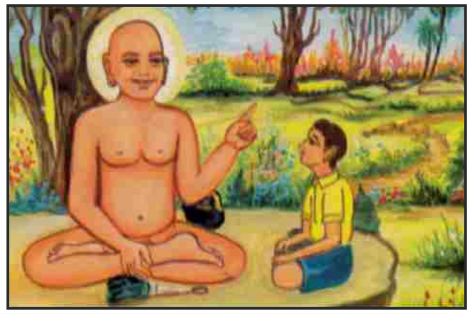

यों तो देव (अरिहंत एवं सिद्ध) का सबसे ज्यादा महत्व है लेकिन चूंकि वर्तमान में साक्षात देव तो हैं नहीं, और जिनवाणी मौन है, इस कारण गुरू (आचार्य, उपाध्याय व साधु) का सबसे ज्यादा महत्व है क्योंकि गुरू ही शास्त्रों का अर्थ समझाते हैं, देवों की महिमा बताते हैं।

गुरू संगति जीवन को उंचा उठाती है। गुरू ही अबोध को बोध देते हैं और भव्य जीवों को सत्पथ की ओर प्रेरित करते हैं।

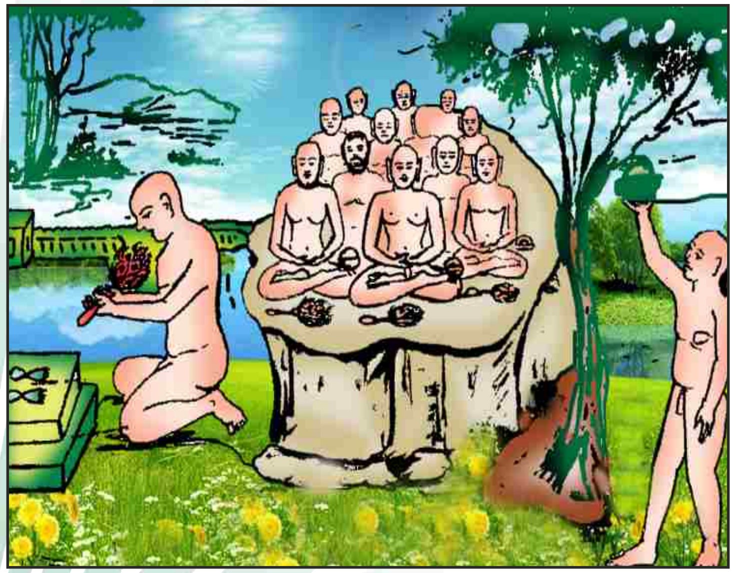

चन्द्रगुप्त मुनिराज कहाये,
भद्रबाहु के शिष्य बताये,
गुरू चरणों की करते पूजा,
संग में न था कोई दूजा।

बारह वर्ष रहे थे जंगल,
गुरू भक्ति से हुआ था मंगल,
देवों ने आ नगर बसाया,
बारह वर्ष आहार कराया।

चमत्कार जग को दिखलाया,
गुरू भक्ति का पाठ सिखाया,
चंद्रगुप्त को शीष झुकाओ,
गुरूभक्ति जीवन में लाओ।

गुरू की निन्दा जो करेगा, दर दर ठोकर खायेगा।
गुरू की भक्ति जो करेगा, निश्चित ही शिवपद पायेगा।।

5

जीव–विज्ञान (चार्ट)

जीव

संसारी — शरीर सहित जीव जन्म मरण के दु:ख भोगते हैं

शरीर रहित कर्मों से मुक्त जीव अनंत सुख भोगते हैं — **मुक्त**

त्रस

द्विन्द्रिय
लट, कृमि, केंचुआ, शंख

त्रिइन्द्रिय
चींटी, जूं, खटमल, मकड़ा

चार इन्द्रिय
भौंरा, तीतली, मछर, मक्खी

पंचेन्द्रिय

संघी
(मनसहित)
मनुरुष्य, देव, नारकी, हाथी

असंघी
(मनरहित)
गोह, जल, सर्प

स्थावर
(एक इन्द्रीय)

पृथ्वीकायिक
मिट्टी, पहाड़

जलकायिक
पानी, बर्फ

अग्निकायिक
लौ, चिंगारी

वायुकायिक
हवा, तुफान

वनस्पतिकायिक
वृक्ष, पौधे

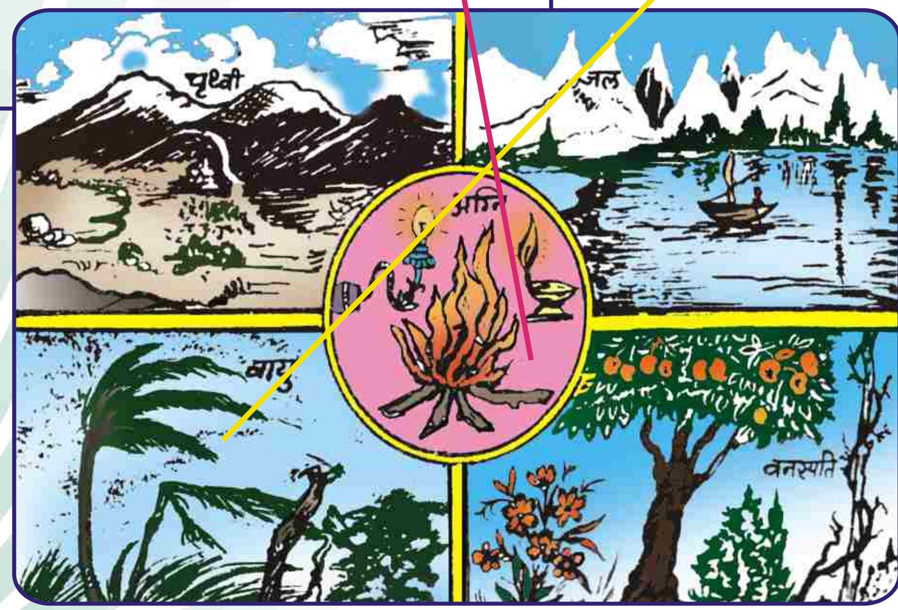

मैं कौन हूँ।

मैं चैतन्य स्वरूप आत्मा हूँ।
मुझ में ज्ञान है।
मैं ज्ञान से जानता हूँ ।
मैं दर्शन से देखता हूँ।
मुझमें सुख है।
मुझमें अनन्त शक्ति है।

मैं जीव हूँ

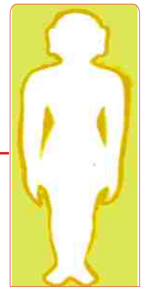

शरीर अजीव है

मैं शरीर नहीं हूँ

शरीर जड़ है ।
शरीर में ज्ञान नहीं है।
शरीर कुछ नहीं जानता।
शरीर में सुख नहीं है।
शरीर में कोई शक्ति नहीं है।

मैं और शरीर अलग-अलग है।

मैं कौन ?

मैं संसारी आत्मा हूं,
मुझे मुक्त आत्मा बनना है।

तीन लोक रचना

तीन लोक

"हम कहां रहते हैं ?"

पुरूषकार लोक के तीन भेद हैं
1. उर्ध्वलोक 2. मध्यलोक 3. अधोलोक

* अधोलोक में सात नरक हैं।
* मध्यलोक में असंख्यातों द्वीप समुद्र हैं।
* सबके बीच में पहला जम्बूद्वीप है।
* उर्ध्वलोक में सोलह स्वर्ग, नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश, पांच अनुत्तर है।
* उनके ऊपर सिद्ध शिला है।
* सिद्धशिला से ऊपर लोक के अग्रभाग में सिद्ध परमेष्ठि विराजमान है।
* लोकाकाश में कटि के समान मध्य का मध्यलोक है।
* नीचे से ऊपर तक लगभग 13 राजू लम्बी, एक राजू चौड़ी और एक राजू मोटी त्रसनाली है।इसी में त्रसजीव रहते हैं।

मध्यलोक के बीचों–बीच के जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है, उसके आर्यखण्ड में हम और आप सभी लोग रहते है। सारी दुनिया इसी में है।

जम्बूद्वीप

8

गति

जीव की अवस्था विशेष को 'गति' कहते हैं।
गतियाँ कितनी होती हैं, गतियाँ चार होती हैं।

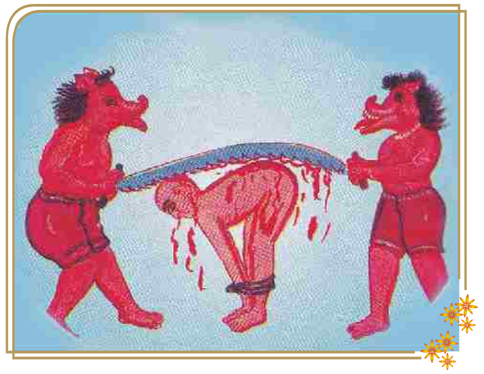

जहां नारकी होते हैं,
'नरकगति' उसे कहते हैं।

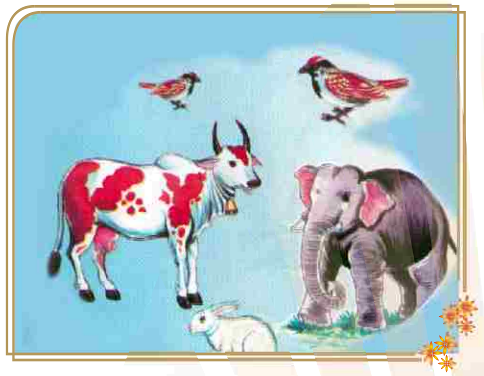

जहां पशु पक्षी होते हैं,
'तिर्यन्च गति' उसे कहते हैं।

जहां मानव होते हैं,
'मनुष्यगति' उसे कहते हैं।

जहां पर देव होते हैं,
'देवगति' उसे कहते हैं।

- गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त होने वाली पर्याय को गति कहते हैं।
- सिद्ध या मुक्त जीव किसी भी गति के जीव नहीं हैं।
- नारकी, देव, मनुष्य पन्चेन्द्रिय ही होते हैं। तिर्यंचों के यथायोग्य 1,2,3,4 और 5 इन्द्रियां होती हैं।

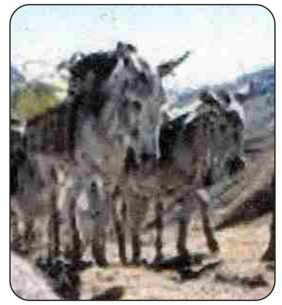

ये गतियाँ कैसे मिलती हैं, कारण यहाँ बताते हैं।
जिसमें जाना वैसा करना, तुमको सब समझाते हैं।।

हिंसा पाप जो करते हैं, प्रभु जाप न करते हैं।
नरक गति में जाते हैं, दुःखमय जीवन पाते हैं।।

मायाचारी करते हैं, बगुला जैसा रहते हैं।
तिर्यंच गति को पाते हैं, पशु बन भार उठाते हैं।।

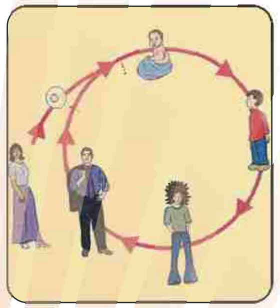

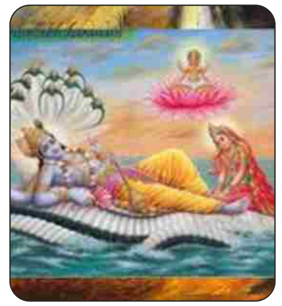

मधुर वचन जो कहते हैं, दया धर्म में रहते हैं।
मनुष्य गति वे पाते हैं, हम जैसे बन जाते हैं।।

पांच पाप का त्याग करें, पांच व्रतों को आप धरें।
संयम भाव सजाते हैं, देवगति को पाते हैं।।

सबसे अच्छी गति 'मनुष्यगति' है

क्योंकि संयम पालन कर मोक्षपद
मनुष्यगति से ही प्राप्त कर सकते हैं।

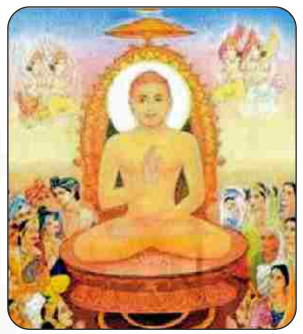

9

'कषाय' पराधीन करती है

जीव को कसती कर्मों से, दूर हटाती धर्मों से।
भव–भव में भटकाती है, वह कषाय कहलाती है।।

सुनो, कषाय होती है चार।
चार गति के हैं ये द्वार।।
क्रोध, मान,माया, लोभ।
छोड़ो इनको, पाओ बोध।।

क्रोध : गुस्सा करना क्रोध कहाता।

पहले गुस्सा आती है।
बुद्धि को खा जाती है।।
लड़वाती पिटवाती है।
रो रो हमें रूलाती है।।

मान : घमण्ड करना मान कहाता।

मान करे मानी कहलाता।
विद्या, बुद्धि विनय घटाता।।
मानी की यह होती हानि।
कहते हैं जग के सब ज्ञानी।।

माया : छल करना माया कहलाता।

छल माया कहलाती है।
बगुला हमें बनाती है।।
मायाचारी धोखा है।
धक्का मारो मौका है।।

लोभ : लालच करना लोभ कहाता।

लोभ पाप का बाप कहाता।
सारे पाप यही करवाता।।
एक हुये तो सौ की इच्छा।
छोड़ो लालच पाओ साता।।

हे बन्धुओं,
अगर सुख, शांति, आनंद चाहते हो तो,

क्रोध को क्षमा से जीतो।
मान को विनय से जीतो।।
माया को सरलता से जीतो।
लोभ को संतोष से जीतो।।

एक दिन निश्चित ही इस संसार से भी जीत जाओगे।

10

"पाप से बचें"

बुरा काम ही पाप कहाता, नरक निगोद है ले जाता।
उनकी संख्या होती पांच, मत आने दो इनकी आंच।।
हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील अरू परिग्रह बोता है।
वो नर जनम जनम में भाई, दुःख का बोझा ढोता है।।

हिंसा :

किसी जीव को नहीं सताओ,
सब जीवों के प्राण बचाओ।
परम अहिंसा धर्म बताता,
हिंसा पहला पाप कहाता।।

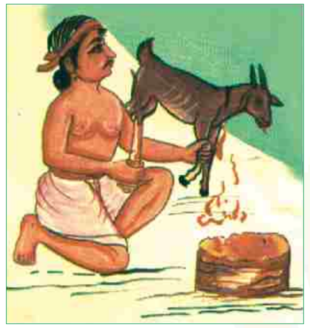

झूठ :

झूठ कभी मुख से मत बोलो,
सदा सत्य हदय से बोलो।
सत्य धर्म यह पाठ सिखाता,
झूठ पाप से हमें बचाता।।

चोरी :

नहीं किसी की वस्तु चुराओ,
मालिक की आज्ञा से लाओ।
धर्म अचौर्य यही सिखाता,
चोरी तीजा पाप कहाता।।

कुशील :

बुरी नजर से कभी न देखो,
पर नारी को माँ सम देखो।
ब्रहमचर्य यह पाठ सिखाता,
कुशील पाप से हमें बचाता।।

परिग्रह :

कभी अधिक पैसा मत जोडो,
ममता लालच मन से छोडो।
अपरिग्रह का नियम बनाओ,
जोड़ परिग्रह नरक न जाओ।।

पांच पाप से रहना दूर,
पाओगे तुम सुख भरपूर।
विद्या पास में आयेगी,
तुमको मोक्ष दिलायेगी।।

11

'जब बोलो तब सच-सच बोलो'

कहानी

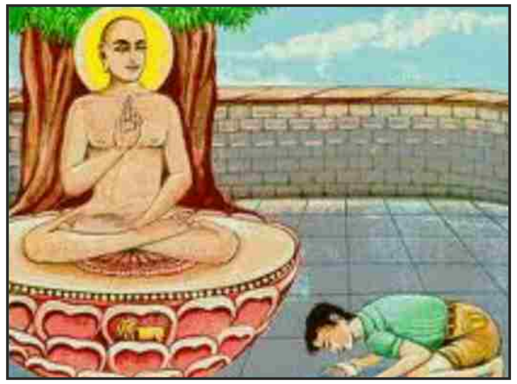

एक बार की बात है एक चोर जंगल में जा रहा था, उसे रास्ते में एक मुनिराज के दर्शन हो गये। वह चोर मन में सोचता है कि ये देवता हैं, पंहुचे हुये संत हैं अथवा सिद्ध पुरूष हैं जो इस भयानक जंगल में निर्द्वन्द होकर बैठे हुये हैं। वह चोर उनके चरणों में बैठा तो उसका वहां से उठने का मन नहीं हुआ। तभी महाराज ने अपना ध्यान खोला और चोर को अपने सामने बैठा हुआ पाया। चोर बोला- भगवन् ! धर्म किसे कहते हैं। मुनिराज ने कहा - 'चारित्रं खलु धम्मो'।

महाराज ने पूछा - आप क्या करते हो ? उसने कहा- 'चोरी'। महाराज ने कहा - बस, झूठ बोलना छोड़ दो। उसने मुनिराज को नमस्कार किया, महाराज ने धर्मवृद्धिरस्तु का आशीर्वाद दिया। चोर ने झूठ का त्याग कर दिया और वापस घर आ गया।

दूसरे दिन वह राजमहल में चोरी करने के लिये गया तो सभी ने उससे पूछा कि 'भैया, आप कौन हैं ? वह बोला - मैं चोर हूं। उसके इस प्रकार बोलने पर किसी को विश्वास नहीं हुआ, कि यह चोर है, क्योंकि चोर कभी अपने मुख से ऐसा नहीं बोल सकता है। और सभी लोगों ने उसे अन्दर चले जाने दिया, वह भी चला गया। चोरी करके सामग्री की पोटली बांधकर राजमहल से वापिस भी चला आया। किसी ने उसे कुछ नहीं कहा।

लेकिन प्रातःकाल होने पर पता चला कि

राजमहल में चोरी हो गई है। राजा ने सभी सैनिकों को बुलाकर पूछा कि -क्या रात्रि में कोई राजमहल में आया था ? सभी सैनिकों ने कहा - आया था। तब राजा ने कहा - उस व्यक्ति की खोज की जाये। उसी समय चारों तरफ चोर की खोज करने के लिये सैनिक निकल पडते हैं और देखते हैं कि एक जंगल में वही व्यक्ति जो राजमहल में प्रवेश करते समय बोला था कि 'मैं चोर हूँ' वृक्ष के नीचे बैठा है। उससे पूछा कि -'तुम कौन हो ?' वह बोला -'मैं चोर हूं।' पूछा - 'तुमने राजमहल में चोरी की ?' बोला -'हां। कहा - 'तुमको राजा ने बुलवाया है। और वह सारी सामग्री को लेकर राजमहल में पंहुच गया।

राजा ने भी उससे सारी बातें पूछीं, उसने सारी बातें राजा को सही-सही बता दीं। जिससे राजा का गुस्सा कम हो गया। तब राजा ने पूछा -'तुमने चोरी क्यों की ?' तो चोर ने सारी परिस्थिति बता दी। फिर राजा ने उससे पूछा -'तुमने चोरी की तो फिर सत्य क्यों बोला ?'

चोर ने कहा -'मुझे जंगल में मुनिराज मिले थे, उनसे मैंने नियम लिया था कि मैं सत्य बोलूंगा, लेकिन चोरी करना नहीं छोड सकता। इसके पश्चात राजा ने उसे सत्य बोलने पर बहुत सारा धन देकर सम्मानित किया।

देखा बच्चों, वह चोर था, पर उसे मुनिराज के वचनों पर श्रृद्धा थी, वह अपने नियम पर अटल रहा तो उसे सत्य बोलने का फल मिला।

सत्य ही सच्चा धर्म है, जिससे नियम से सफलता मिलती है। याद रखना! तुम वीर प्रभु की निडर संतान हो, इसलिये जीवन में कुछ भी बनने से पहले एक सच्चे और अच्छे इंसान बनो।

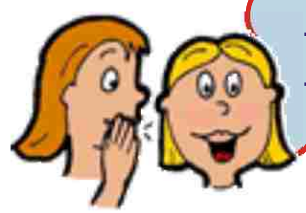

जब बोलो तब ''सच–सच'' बोलो,
कभी न बातें रच–रच बोलो।
जब बोलो तब हंसकर बोलो,
बातों में मिश्री सी घोलो।

जब बोलो तब हितकर बोलो,
मन में आदर भरकर बोलो।
जब बोलो तब कम ही बोलो,
बिना अवसर मत मुंह को खोलो।

कभी न झूठ तुम किसी से बोलो,
कभी न बात छिपा कर बोलो।
कभी किसी का भेद न खोलो,
निंदा चुगली का मल धो लो,
जब बोलो तब ''सच–सच'' बोलो।

सरस्वती मंत्र
ॐ ह्रीं श्रीं वद् वद् वाग्वादिनि भगवती सरस्वती ह्रीं नमः

श्रावक

श्रावक के 'अष्ट मूलगुण'

श्राविका

सम्यक श्रृद्धा ज्ञानवान जो, विवेकवान वा क्रियावान हो।
होवे अष्ट मूलगुणधारी, श्रावक होने का अधिकारी।।

मूलगुण का अर्थ है जड़

– जैसे वृक्ष का आधार उसकी जड़ होती है, उसके बिना वृक्ष नहीं होता, उसी प्रकार श्रावक होने के जो आधारभूत मुख्य गुण हैं, उन्हें मूलगुण कहते हैं।

अष्ट मूलगुण :

1.मद्य, 2.मांस, 3.मधु, 4.बड़, 5.पीपल, 6.पाकर, 7.कठूमर, 8.गूलर।

आठों का त्याग अष्ट मूलगुण है।

महिमा

पुरूरवा भील मुनि को मारना चाहता था। उसकी स्त्री ने कहा, 'इन्हें मत मारो, ये वन देवता हैं। तब उसने मुनि को नमस्कार किया। मुनि ने उपदेश देकर मद्य, मांस, मधु और पांच उदम्बर फलों का त्याग करा दिया। भील इस व्रत के पालन से मरने पर स्वर्ग में देव हो गया, यही भील का जीव कालांतर में भगवान महावीर हुआ है।

द्वितीय प्रकार के अष्ट मूलगुण :

1.मद्य (शराब) का त्याग
2. मांस का त्याग
3.मधु (शहद) का त्याग
4.पंच उदम्बर फल का त्याग
5.रात्रि भोजन का त्याग
6.अनछने जल पीने का त्याग
7.नित्य देवदर्शन करना।
8.जीवदया का पालन करना।

13

"धर्म अहिंसा सच्चा है"
जैसा अन्न वैसा मन

अहिंसक आहार जैन दर्शन का मूल सिद्धांत है।

भोजन जीवन का आधार है, आधार हमारा मजबूत होना चाहिये।जितने भी शरीर में रोग होते हैं वे सभी अशुद्ध भोजन करने से होते हैं। साथ–साथ जीवों की रक्षा करना हमारा प्रमुख कर्तव्य है इसीलिये इन बातों को ध्यान में रखकर भगवान महावीर ने हम सब के लिये

(1) 'कब' भोजन करना, (2)'क्या' भोजन करना एवं, (3)'कैसे' भोजन करना चाहिये, यह बतलाते हुये कहते हैं –

1. रात्रि भोजन त्याग :

- दिन में सूर्य की किरणें भोजन में जीवों को उत्पन्न होने नहीं देतीं।
- रात्रि में भोजन में बैक्टेरिया एवं वायरस मिल जाने से भोजन विषमय हो जाता है और जब कभी भोजन में कीडे–पतंगे गिर जाने से पूरा मांसभक्षण का दोष लगता है।

रात्रि भोजन करना नहीं

- रात्रि में भोजन करके सो जाने पर पाचन क्रिया खराब हो जाती है एवं विचार विकृत होते हैं।जिससे कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

पानी छान कर पीना –

पानी की एक बूंद में असंख्यात जीव (36450) होते हैं जो हमें दिखाई नहीं पड़ते।बिना छने पानी पीने से उन जीवों का घात होता है और हमारा स्वास्थ्य भी बिगड़ता है।

अन छना जल पीना नहीं

इसलिए बच्चों जीवों की रक्षा एवं मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य हेतु हमेशा ध्यान रखना।

रात का बना रात में न खायें,
रात का बना दिन में न खायें,
दिन का बना रात में न खायें ,
तो फिर,
दिन का बना दिन में ही खायें।
सदा ही पानी छान कर पीना।
इसी से जैनी पहचाना जाता।

महिमा

एक सियार ने सागरसेन मुनिराज के पास रात्रि भोजन का त्याग कर दिया। एक दिन वह सियार बहुत प्यासा था, बावडी में पानी पीने के लिये उतरा।वहां अंधेरा दिखने से रात्रि समझकर ऊपर आ गया। ऊपर प्रकाश देखकर फिर नीचे आ गया। नीचे बार–बार अंधेरा देखने से और रात्रि में पानी पीने का त्याग होने से वह मर गया।इस व्रत के प्रभाव से वह सियार मनुष्य गति में प्रीतिकर कुमार हो गया।उसी भव में मुनि दीक्षा लेकर कर्मों से छूट कर मुक्त हो गया।

देखा बच्चों,

रात्रि भोजन करने से मनुष्य ऊल्लु, बिल्ली आदि पशु बन जाते हैं और यह पशु मनुष्य क्या भगवान बन गया। इसीलिये हमें रात्रि भोजन का त्याग कर देना चाहिये।

2. अभक्ष्य भोजन करने से अनेकों प्रकार के रोग हो जाते हैं, इसीलिये निर्मल मन, स्वस्थ काया और सुखी जीवन के लिये सादा, सात्विक, संतुलित एवं शुद्ध भोजन करना चाहिये।

हमको अपने भोजन में कोई भी ऐसी वस्तु प्रयोग नहीं करना चाहिये जिसमें जीव हिंसा हुई हो जैसे : नानवेज(मांसाहारी), अण्डे, केक, शहद, शराब, सिगरेट, तम्बाकू, विदेशी चाकलेट, लाल निशान वाली खाद्य वस्तुयें आदि।

जमीन के अंदर पैदा होने वाली – आलू, प्याज, गाजर आदि सब्जियां, पांच उदंबर फल, डबलरोटी (ब्रेड) बिस्कुट, बाजार की चाट–पकौडी, होटल का अशुद्ध भोजन, कोल्डडिंक आदि नहीं खाना चाहिये।

हमें सौंदर्य प्रसाधन अथवा सजावट संबंधित किसी ऐसी वस्तुओं का इस्तेमाल नहीं करना चाहिये जिसमें किसी पशु आदि के शरीर का कोई पदार्थ प्रयोग किया गया हो। रेशमी कपडे, चमडे के जूते, बेल्ट व पर्स आदि का प्रयोग न करें।

3. भोजन को मजबूरी, लापरवाही या अज्ञानता से नहीं करना चाहिये।
भोजन करते समय हमारे विचार जितने अच्छे रहेंगे, भोजन उतना ही सुपाच्य और लाभकारी होगा।

भोजन करते समय कुछ नैतिक शिक्षाएं

– अच्छी तरह हाथ–पैर धोकर भोजन करना।
– भोजन से पहले और अंत में भगवान का स्मरण करना।
– कभी भी जूते–चप्पल पहनकर, खडे–खडे, लेटे–लेटे, चलते–फिरते भोजन नहीं करना।

– भोजन अच्छे से चबाकर खाना, थाली के बाहर नहीं गिराना।
– भोजन के समय पुस्तक नहीं पढना, टी.वी.नहीं देखना, रेडियो नहीं सुनना, खेलना नहीं, गप–शप नहीं करना।

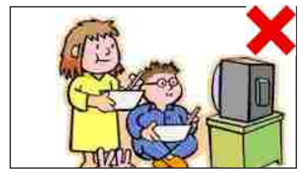

– भोजन झूठा नहीं छोडना, हाथों को जीभ से नहीं चाटना।
– साफ–सुथरे ढंग से एवं समय पर भोजन करना, बिना भूख के भोजन नहीं करना, भोजन करते समय नखरे नहीं करना।

– भोजन के अंत में प्रभु को धन्यवाद एवं बनाने और परोसनेवाले से कुछ मीठे शब्द बोलना। भोजन के पश्चात अपनी झूठी थाली स्वयं उठाकर उचित स्थान पर रखें।

इस तरह हम प्रतिदिन विधिपूर्वक भोजन ग्रहण करें तो वह हमें स्वस्थ जीवन प्रदान करेगा।

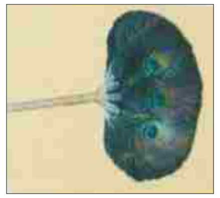

चतुर्विध संघ

मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका
इन चारों के समुदाय को चतुर्विध-संघ कहते हैं।

1.मुनि :

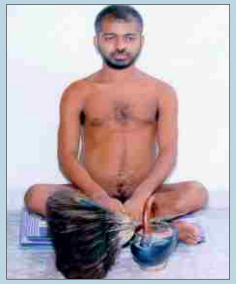

'नमोस्तु महाराज'

- जो समस्त परिग्रहों से रहित होते हैं।
- नग्न दिगम्बर होते हैं।
- पिच्छी, कमण्डलु एवं शास्त्र रखते हैं।
- दिन में एक बार खडे होकर अपने करपात्र में शुद्ध आहार लेते हैं।
- केशलोंच करते हैं एवं पैदल विहार करते हैं।
- 28 मूलगुणों का पालन करते हैं उन्हें मुनि कहते हैं।

2.आर्यिका

'वंदामि' माताजी

- जो पिच्छी कमण्डलु रखती हैं।
- सिर्फ एक (सफेद)साडी पहनती हैं।
- मुनियों की तरह मूलगुणों का पालन करती हैं।
- केशलोंच, दिन में एक बार बैठकर हाथ में आहार लेती हैं उन्हें आर्यिका कहते हैं।

3. श्रावक

- जो श्रृद्धावान, विवेकवान और क्रियावान हो उसे श्रावक कहते हैं।

उत्कृष्ट श्रावक के दो भेद हैं–

ऐलक | **क्षुल्लक**

ऐलक

इच्छामि महाराज

- जो केवल लंगोट मात्र पहनते हैं।
- पिच्छी कमण्डलु रखते हैं।
- केशलोंच, बैठकर हाथ में आहार ग्रहण करते हैं।
- ग्यारह प्रतिमाओं का पालन करते हैं।

क्षुल्लक

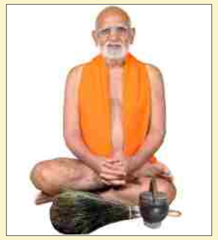

इच्छामि महाराज

- जो पिच्छी कमण्डलु रखते हैं।
- एक लंगोट एवं छोटा दुपट्टा(सफेद या केसरिया) रखते हैं।
- बैठकर कटोरे में आहार करते हैं।
- केशलोंच करते हैं या कैंची से भी बाल बना सकते हैं।
- आवश्यकता होने पर गाडी में भी विहार कर सकते हैं।
- ग्यारह प्रतिमाओं का पालन करते हैं।

4. श्राविका

क्षुल्लिका

इच्छामि माताजी

उत्कृष्ट श्राविका को क्षुल्लिका कहते हैं।

- जो क्षुल्लक की तरह सभी क्रियायें करती हैं।
- एक साडी और एक चादर रखती हैं।
- ग्यारह प्रतिमाओं का पालन करती हैं।

अन्य प्रतिमाधारी श्रावक (भैयाजी) व श्राविका (बहनजी) को 'वंदना' एवं साधर्मी भाई–बहनों से 'जय जिनेन्द्र' कहना चाहिये।

'दान'

अपने और पर के उपकार के लिये चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान देना चाहिये।

1. आहार दान

श्रद्धा भक्ति पूर्वक (नवधा भक्ति) प्रासुक अन्न आदि आहार सुपात्र को देना आहारदान कहलाता है।

नवधा भक्ति –

1.पड़गाहन
2. उच्चासन
3.पाद प्रक्षालन
4. पूजन
5.नमन
6. मनशुद्धि
7.वचन शुद्धि
8. काय शुद्धि
9.आहार शुद्धि

महिमा

भोगवती नगरी के राजा कामवृष्टि की रानी विष्टदाना के गर्भ में पापी बालक के आते ही राजा की मृत्यु हो गई और राजा के नौकर सुकृतपुण्य के हाथ में राज्य चला गया।

माता ने बालक को पुण्यहीन समझकर उसका नाम "अकृतपुण्य" रख दिया और पराई मजदूरी करके उसका पालन किया। किसी समय वह बालक राजा के खेत में काम करने के लिये चला गया। राजा ने उसे अपने स्वामी का पुत्र समझकर बहुत कुछ दीनारें दीं किन्तु उसके हाथ में आते ही वे दीनारें अंगारे हो गईं। तब उसको उसकी इच्छानुसार चने दे दिये, वे भी लोहे के बन गये। माता ने इस घटना से देश छोड दिया और सीमवाक गांव के बलभद्र नाम जैन श्रावक के यहां भोजन बनाने का काम करने लगी।

सेठ के बालक को खीर खाते देखकर वह अकृतपुण्य भी खीर मांगा करता था। तब एक दिन सेठ के लडकों ने अकृतपुण्य को थप्पडों से मारा। सेठ ने उक्त घटना को जानकर बहिन विष्टदाना को

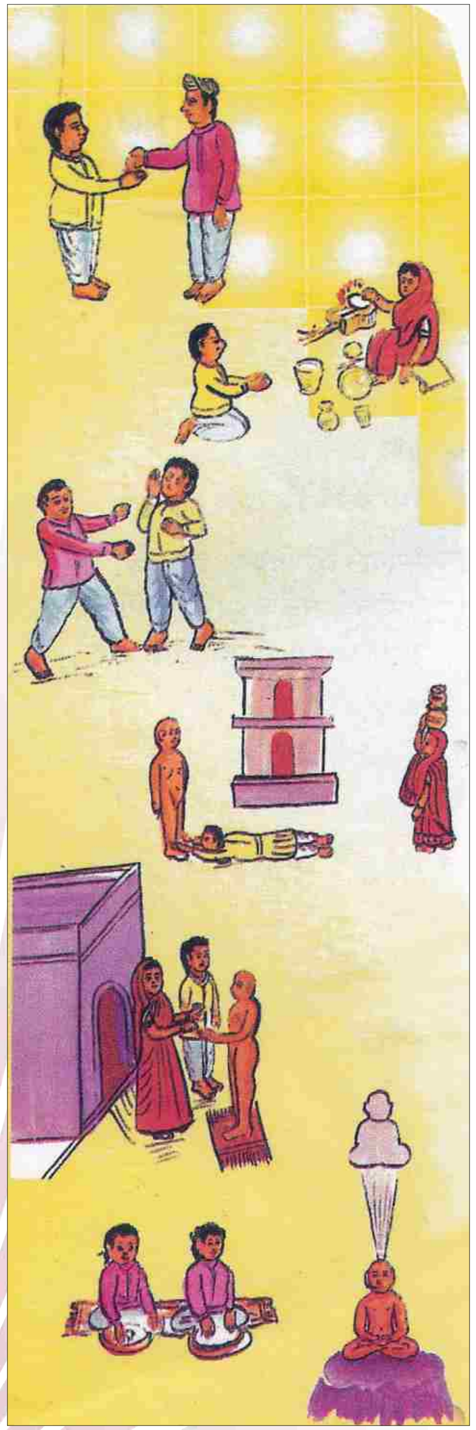

खीर बनाने के लिये सारा सामान दे दिया। माता ने खीर बनाकर बालक से कहा बेटा, मैं पानी भरने जाती हूं, इसी बीच में यदि कोई मुनिराज आवें तो उन्हें रोक लेना, मैं मुनिराज को आहार देकर तुझे खीर खिलाऊंगी।

भाग्य से सुव्रत मुनिराज उधर आ गये। बालक ने कहा, मुनिराज! आप रूको। मेरी मां ने खीर बनाई है, आपको आहार देंगी। मुनिराज के न रूकने से बालक ने जाकर उनके पैर पकड लिये और बोला, देखूं अब कैसे जाओगे? उधर माता ने आकर पडगाहन करके विधिवत् आहार दिया। बालक आहार देखकर बहुत प्रसन्न हो रहा था। मुनिराज अक्षीण ऋद्धिधारी थे। ऋद्धि के प्रभाव से उस दिन खीर का भोजन समाप्त नहीं हो रहा था। तब विष्टदाना ने सपरिवार सेठजी को, अनंतर सारे गांव को भोजन करा दिया, फिर भी खीर ज्यों की त्यों रही।

अगले दिन बालक वन में गाय चराने के लिये गया। वहां उसने मुनि का उपदेश सुना। रात्रि में व्याघ्र ने उसे खा लिया। आहार देखने के प्रभाव से वह अकृतपुण्य मरकर स्वर्ग में देव हो गया। पुनः उज्जयिनी नगरी के सेठ धनपाल की पत्नी प्रभावती के धन्यकुमार नाम का पुण्यशाली पुत्र हुआ। जन्म के बाद उसकी नाल गाडने को जमीन खोदते ही धन का बडा घडा निकला। धन्यकुमार जहां–जहां हाथ लगाता, वहां धन ही धन हो जाता था। आगे चलकर यह धन्यकुमार नवनिधियों का स्वामी हो गया और असीम धन–वैभव को भोगकर पुनः दीक्षा लेकर अंत में सर्वार्थसिद्धि में अहमिंद्र हुआ। यह है आहारदान का प्रभाव जिससे महापापी अकृतपुण्य भी धन्यकुमार हो गया।

2) शास्त्र दान :

**भव्य जीवों को श्रृद्धापूर्वक जिनवाणी भेंट करना
अथवा धर्मोपदेश देना ज्ञानदान या शास्त्रदान कहलाता है।**

महिमा

कोण्डेश ग्वाला जिसका नाम,
गाय चराना उसका काम।
गायें लेकर गया था जंगल,
बादल बरसे करने मंगल।

वृक्ष के नीचे बैठने आया,
तब कोटर में शास्त्र दिखाया।
शास्त्र को लेकर वह घर आया,
धूप में रख कर उसे सुखाया।

उस जंगल में मुनिवर आये,
ग्वाला फूला नहीं समाये।
ग्वाला लेकर पंहुचा शास्त्र को लेकर,
धन्य हुआ वह मुनि को देकर।

शास्त्र दान का यह फल पाया,
ग्वाला कुन्द–कुन्द कहलाया।
शास्त्र दान की शिक्षा पाओ,
पढो, सुनो जीवन में लाओ।

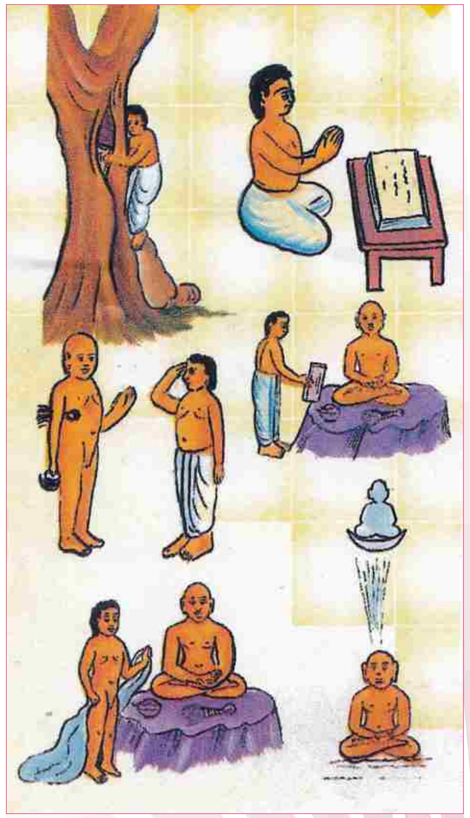

3) औषधि दान :

श्रृद्धापूर्वक सद्पात्र को
अनुकूल औषधि, पथ्य आदि देना
औषधि दान कहलाता है।

4) अभय दान :

प्राणी मात्र को सुरक्षा और प्रेम देकर आश्वस्त करना
अभयदान कहलाता है।

यह सर्वश्रेष्ठ दान है।

करते रहो सदा तुम सेवा,
सेवा से मिलती है मेवा।
सेवा से तुम मत घबराना,
दीन दुःखी का दुःख मिटाना।

सेवा है जग में सुख मूल,
इसे न जाना बच्चों! भूल।
मिलती इससे बडी बढाई,
यह है सबसे बडी कमाई।

जो व्यक्ति श्रृद्धापूर्वक, आनंदपूर्वक, आदरपूर्वक, विवेकपूर्वक निर्मल परिणामों से दूसरों का उपकार करते हैं, भला करते हैं उनका भला अपने आप ही हो जाता है।

16

"अनमोल समय"

"अच्छे बच्चे हम कहलाते!"

सुबह जल्दी हम उठ जाते,
उठकर णमोकार को ध्याते।

माता–पिता को शीष झुकाते,
'संस्कारी' बच्चे हम कहलाते।

प्रासुक जल से रोज नहाते,
उज्जवल कपड़े पहन के आते।

अष्ट द्रव्य ले मंदिर जाते,
'सच्चे' बच्चे हम कहलाते।

परिक्रमायें तीन लगाते,
दर्शन कर प्रभु गुण गाते।

जिन प्रतिमा को अर्घ चढाते,
'प्रतिभावान' बच्चे हम कहलाते।

हाथ पैर धो भोजन करते,
आलू प्याज कभी न खाते।

समय पर काम स्वयं ही करते,
'उत्साही' बच्चे हम कहलाते।

हंसी खुशी विद्यालय जाते,
विद्या, बुद्धि, विनय बढाते।

परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते,
'आदर्श' विद्यार्थी हम कहलाते।

अनुशासित चर्या को हम अपनाते,
अच्छे मित्रों संग खेलने जाते।

रात्रि भोजन कभी न करते,
'निडर' बच्चे हम कहलाते।

मन लगाकर अध्ययन करते,
घर में बडों की सेवा करते।

धर्मज्ञान पाकर सो जाते,
'आज्ञाकारी' बच्चे हम कहलाते।

अनमोल समय व्यर्थ न गंवाते,
दृढ निश्चय कर पुरूषार्थ जगाते।

जीवन में उच्च लक्ष्य पा जाते,
'अच्छे' बच्चे हम बन जाते।

17

“जैन पर्व”

पर्व का अर्थ पवित्र दिवस होता है अर्थात वह मुख्य दिवस, विशेष या पवित्र दिवस जिसमें श्रावक धर्मध्यान, ज्ञान एवं सदाचरण के द्वारा आत्मकल्याण करता है।

जैन पर्व के मुख्यतः तीन प्रकार हैं।

1) साधारण पर्व (नित्य पर्व): अष्टमी, चतुर्दशी, पंचमी आदि प्रतिमाह में होते हैं।

2) नैमित्तिक पर्व : जो महापुरूषों के निमित्त से होते हैं वे नैमित्तिक पर्व कहे जाते हैं – जैसे दीपावली, महावीर जयंती आदि।

क) दीपावली पर्व : कार्तिक कृष्णा अमावस्या के प्रातःकाल के समय अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामी को निर्वाण प्राप्त हुआ वहीं सांयकाल गौतम गणधर स्वामी को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी। इसीलिये दीपावली को पर्व के रूप में मनाया जाता है।

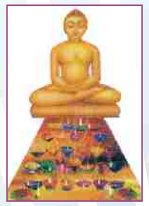

ख) महावीर जयंती पर्व : चैत्र शुक्ला तेरस को भगवान महावीर के जन्म महोत्सव के रूप में मनाया जाता है।

ग) रक्षाबंधन पर्व : श्रावण माह की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस दिन विष्णुकुमार मुनि ने 700 मुनियों की रक्षा की थी, फिर प्रजा ने मुनिसंघ को आहार दिया, इस पर्व की स्मृति में बहनों ने भाइयों की कलाई में रक्षा का सूत्र बांधा।

3) नैसर्गिक (शाश्वत) पर्व : जो अनादिकाल से चले आ रहे हैं –भूत, वर्तमान, भविष्य तीनों कालों में अहर्निश चलते रहते हैं।

क) दशलक्षण पर्व : यह पर्व वर्ष में तीन बार माघ, चैत्र व भाद्रपद मास में आता है। सामान्यतः यह भाद्रपद में ही मनाया जाता है। इस पर्व में आत्मा के उत्तम क्षमादि दश धर्मों/गुणों की आराधना की जाती है।

ख) सोलहकारण पर्व : प्रतिवर्ष भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा से आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक मनाया जाता है। इसमें तीर्थंकर प्रकृति बंध के कारण षोडशकारण भावनाओं का चिंतवन किया जाता है।

ग) अष्टान्हिका पर्व : प्रतिवर्ष कार्तिक –फाल्गुन –आषाढ की शुक्ला अष्टमी से पूर्णिमा तक तीन बार आता है। बडे धूमधाम से मनाया जाता है।

इन पर्व के दिनों में विशेष रूप से यथाशक्ति व्रत, नियम, एकासन, उपवास आदि तप–संयम कर आत्म कल्याण करना चाहिये।

18

‘मेरी भावना’
जैसा सोचोगे वैसा ही पाओगे !

- यह सारा विश्व अनादि अनंत है।इसे किसी ईश्वर ने नहीं बनाया है।
- कोई भी जीव जो अच्छे या बुरे भाव करता है या बुरे वचन बोलता है अथवा बुरे कार्य करता है उसी के अनुसार पुण्य और पाप रूपी कर्मों का बंध करता है।

इसीलिये भगवान किसी के सुख–दुःख या जगत का कर्ता नहीं है।
“मैं जो हूं अपने कारण हूं, जो बनूंगा मेरे हाथ में है।”

प्रत्येक जीव ‘स्वयं के अपने भावों से पुण्य–पाप करता हुआ उसका फलरूप सुख भोगता है।

इसलिए बच्चों यदि हम हमेशा पापों से बचकर अच्छे कार्य करेंगे, सब के प्रति मैत्री भाव रखेंगे, दुःखियों की सेवा करेंगे, गुण–ग्रहण का भाव रखते हुये स्वयं के दोषों (कषाय) को विसर्जित करेंगे और सुख हो या दुःख समता भाव से अत्यंत सरल और निर्मल परिणामों के साथ रहेंगे तो निश्चित रूप से एकदिन अनन्त सुख को प्राप्त करेंगे।

अतः

“निरंतर ही ‘मेरे भाव कैसे रहने चाहिये’ यह ‘मेरी भावना’ के माध्यम से समझा रहे रहे हैं, इसे याद करें एवं जीवन में उतारें।”

“मेरी भावना”

जिसने रागद्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्षमार्ग का, निष्पृह हो उपदेश दिया।

बुद्ध,वीर, जिन, हरिहर, ब्रम्हा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो।।1।।

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं।
निजपर के हित–साधन में जो निशदिन तत्पर रहते हैं।

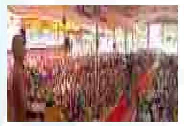

स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं।।2।।

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उनही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।

नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूं।
परधन वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं।।3।।

अंहकार का भाव न रखूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं।
देख दूसरों की बढती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूं।

रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूं।
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं।।4।।

मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करूणा स्तोत्र बहे।

दुर्जन क्रूर कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्य भाव रखूं मैं उनपर, ऐसी परिणति हो जावे।।5।।

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड आवे।
बने जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।

होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह ने मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे।।6।।

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षो तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आ जावे।

अथवा कोई कैसा भी भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे।।7।।

होकर सुख में मग्न न फूलें, दुःख में कभी न घबरावें।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे।

रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढतर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, सहनशीलता दिखलावे।।8।।

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
बैर पाप अभिमान छोड जग, नित्य नये मंगल गावे।

घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें।।9।।

इति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्म निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।

रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से जीया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे।।10।।

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर ही रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे।

बनकर सब युगवीर हृदय से देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुःख संकट सहा करें।।11।।

'तीर्थ का महत्व'

जिससे संसार समुद्र तिरा जाय उसे तीर्थ कहते हैं। तीर्थंकर आदि महापुरूषों ने जहां जन्म लिया, जहां से मोक्ष गये ऐसे पंचकल्याणक स्थानों को भी तीर्थ कहते हैं।

महापुरूषों के चरणरज से उस भूमि के कण–कण में निर्मलता एवं वायुमण्डल में भी ऐसी अलौकिक शक्ति होती है जिससे मानव प्रभु भक्ति में लीन होकर पापों का क्षय करके महान पुण्योपार्जन करता है।

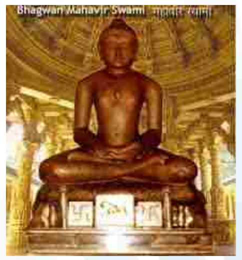

वैसे तो श्री गिरनारजी, चम्पापुरी, पावापुरी, हस्तिनापुर, तारंगाजी आदि सिद्धक्षेत्र एवं महावीरजी, तिजाराजी,अहिच्छत्र पार्श्वनाथ, कुण्डलपुर आदि अतिशय क्षेत्रों की यात्रा हमें करनी चाहिये पर तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी सभी क्षेत्रों में सर्वोपरि माना जाता है।

श्री सम्मेदशिखरजी :

- इस सर्वोपरि तीर्थ का कण–कण महान, पवित्र एवं पूजनीय है।
- वर्तमान के 24 तीर्थंकर में से 20 तीर्थंकर एवं करोडों मुनि यहां से मोक्ष पधारे।
- इस क्षेत्र की भाव सहित वंदना करने से नरक और तिर्यंच गति नहीं होती और वह भव्य जीव अवश्य ही मोक्षपद प्राप्त करता है।

अतः बालकों, तुम्हें सम्मेदशिखरजी महातीर्थ की यात्रा अवश्य करनी चाहिये।

अपने जन्मदिन आदि विशेष अवसर या पर्व पर अन्य फालतू खर्च न करके, तीर्थयात्रा करें, जीवन सफल बनायें।

जिनवाणी स्तुति

हे शारदे माँ, हे शारदे माँ।
अज्ञानता से हमें तार देना।।

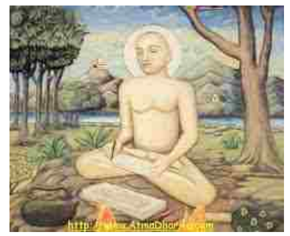

मुनियों ने समझी, गुणियों ने जानी।
शास्त्रों की भाषा, आगम की वाणी।
हम भी तो जाने, हम भी तो समझे।
विद्या का फल तो हमें मात देना।
हे शारदे माँ, हे शारदे माँ।।

तू ज्ञानदायी, हमें ज्ञान दे दे।
रत्नत्रयों का हमें दान दे दे।
मन से हमारे मिटा दे अंधेरें।
हमको उजाले का शिवद्वार देना।
हे शारदे माँ, हे शारदे माँ।।

तू मोक्षदायी है, हे संगीत तूझमें।
हर शब्द तेरा, हर भाव तूझमें।
हम है अकेले, हम है अधूरे।
तेरी शरण है, हमें तार देना।

हे शारदे माँ, हे शारदे माँ।।
अज्ञानता से हमें तार देना।।

21

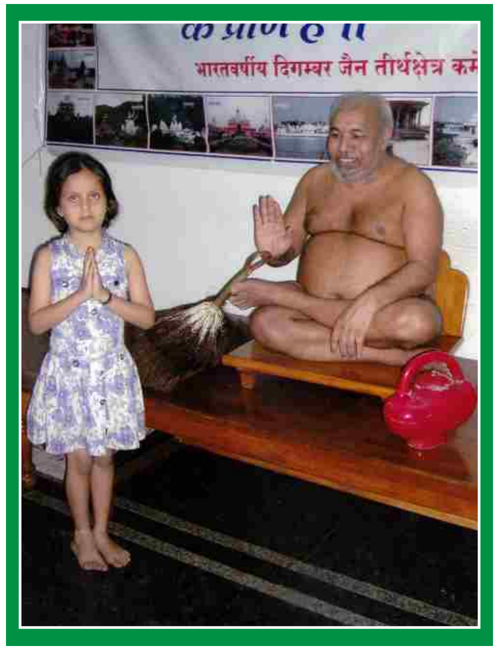

''गुरू भक्ति''

नाम अमर है भरतसागर का, कभी न मिटने पायेगा।
इस दुनिया में जैन का झंडा, कभी न झुकने पायेगा।।

जिनकी ज्ञान रश्मियां देखो, सारे जग में छाय रही।
नव चिंतन से भरी हुई जो, नव संदेश लाय रही।
स्वाभिमानी समता, सद्वाणी, जिनकी निज पहिचान है।
गुरू की भक्ति जो करेगा, निश्चित शिवपद पायेगा।।
नाम अमर है भरतसागर का, कभी न मिटने पायेगा।

एक बार आहार जो करते, केशों का लोचन जो करते।
नंगे पैरों से चलते हैं, भूमि का शोधन करते।
ध्यान मनन चिंतन कर, करत निज का भान है।
गुरू की निंदा जो करेगा, दर–दर ठोकर खायेगा।।

इनके चरण जहां भी पड़ते, वो तीरथ बन जाता है।
गुरू चरण दिनकर सम पाकर, पाप तिमिर छन जाता है।
हम नमन करते हैं उनको, जो गुरूवर की शान हैं।
गुरू की भक्ति जो करेगा, निश्चित शिवपद पायेगा।

नाम अमर है भरतसागर का, कभी न मिटने पायेगा।
इस दुनिया में जैन का झंडा, कभी न झुकने पायेगा।।

22

'अभ्यास क्रम'

प्रश्न 1 पहचानो कौन ?

1 मन सहित जीव
2. पाप का बाप
3. हम जहां रहते हैं
4. वीतरागी सर्वज्ञहितोपदेशी
5. फटाके चलाना
6. श्रद्धावान, विवेकवान, क्रियावान
7. सबसे अच्छी गति
8. छल करना
9. शाश्वत तीर्थ
10. 28 मूलगुणधारी

प्रश्न 2 सही (✓) या गलत (✗) बताएं।

1 अच्छे कार्य को पाप कहते हैं ( )
2 क्रोध को क्षमा से जीतो ( )
3 रात को बना भोजन दिन में कर सकते हैं। ( )
4. संस्कारी बच्चे सुबह नौ बजे उठते हैं। ( )
5. सिद्ध परमेष्ठि देवगति के जीव हैं। ( )
6. दसलक्षण पर्व वर्ष में तीन बार आता है। ( )
7. टी.वी. देखते हुये भोजन करने से दो फायदे होते हैं। ( )

8. भगवान ही मुझे सुख दुःख देते हैं ( )
9. मांस खाना, शराब पीना यह हमारे मूलगुण हैं। ( )
10. पानी की एक बूंद में असंख्यात जीव हैं। ( )
11. मैं शरीर हूं।

प्रश्न 3 सही जोडी बनाएं –

1	मैंने होमवर्क नहीं किया, बताया कि बीमार था।	मान	( )
2.	रात्रि भोजन त्याग	नवधा भक्ति	( )
3.	अष्टमूल गुण	झूठ	( )
4.	क्षुल्लक, ऐलक	स्थावर जीव	( )
5.	आहारदान	इच्छामि	( )
6.	मेरा हमेशा पहला नंबर आता है।	कोण्डेश ग्वाला	( )
7.	वृक्ष	नवदेवता	( )
8.	शास्त्रदान	सियार	( )
9.	हमारे आराध्य	मुनि चंद्रगुप्त	( )
10.	गुरू भक्ति	पुरूरवा भील	( )

पुस्तक अपनी दोस्त बनाओ, पढने लिखने में लग जाओ।

पढें लिखें जो बने महान, उनका सब करते सम्मान।
अज्ञानी को कष्ट अनेक, ज्ञानी बनते सज्जन नेक।
विद्या धन ही सबसे बडा है, जितना दिया उतना बढा है।

विद्या, विनय, विवेक बढाओ,
जीवन अपना सफल बनाओ।।

जैन सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने रात्रि में सोलह स्वप्न देखे। राजा चन्द्रगुप्त दिगम्बर मुनि जैनाचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी के पास जाकर स्वप्नों का फल सुनता है। उन स्वप्नों में से यहाँ पन्द्रहवें स्वप्न का चित्र दर्शाया है- जिस चित्र में एक स्वर्णरथ को दो छोटे-छोटे गाय के बछड़े खींचे जा रहें हैं।

इस स्वप्न का फल निमित्त ज्ञानी आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने बताया है कि :

पंचम काल में संयम का भार युवा पीढ़ी वहन करेगी।

मुनि धर्म का निर्वाह युवावस्था में ही हो सकेगा।

अहो! यह धर्म रूपी रथ हम बालकों के कन्धों पर है, अतः हमें अच्छी तरह धर्मज्ञान पाना चाहिए और सदाचरण करना चाहिए ताकि हमारा जैनधर्म रूपी रथ सदा-सदा आगे बढ़ता रहे!

'जैनम् जयतु शासनम्'